हिन्दी साहित्य का प्रथम मौलिक उपन्यास – 'परीक्षा गुरु'

डॉ.हमीर पी. मकवाना
श्री जे. एम. पटेल पी. जी. स्टडीज एंड
रिसर्च इन ह्युमिनिटीज, आणंद

सारांश: - शुक्लजी ने लाला श्रीनिवासदास के 'परीक्षा गुरु'(१८८२) को हिन्दी का पहला मौलिक उपन्यास माना है। लालाजी लक्ष्मणदास की दिल्ली की कोठी के प्रमुख प्रबंधक थे। उन्हें व्यापारिक जीवन तथा मध्यवर्ग के बिगड़े युवकों का व्यवहारिक अनुभव था। वे 'रणधीर प्रेममोहिनी' जैसा चर्चित नाटक लिख चुके थे। मध्यवर्गीय जीवन के यथार्थ को चित्रित करने के लिए वे साहित्य के नये ढांचे को खोज रहे थे। इसे उन्हों ने 'संसारी वार्ता' कहा है। यह परि-कथाओं से पृथक जीवनानुभव पर आधारित हैं। कथा में आवश्यकतानुसार उलट-फेर चरित्र-चित्रण साकांक्षा आदि के समावेश द्वारा उसे उपन्यास का कामचलाऊ विन्यास मिला हैं। इस उपन्यास में कुसंग के कारण बिगड़े हुए व्यापारी नवयुवक की कथा है जो अच्छे संग के कारण सुधर जाता है। पर बीच-बीच में सुख दुख सज्जनता आदि पर किताबी विचार-विमर्श उबाऊ होता है। अपनी अनेक त्रुटियों के बावजूद यह हिन्दी के यथार्थवादी उपन्यासों की नींव का पत्थर है।

मूलशब्द : - नवजागरण, मध्यवर्ग, देशीशिक्षा, भाषाउन्नति, आधुनिकता, अनुकरण, नीतिशिक्षा, मौलिकता, भावमयता, उपदेशात्मकता ।

प्रस्तावना: -

भारतीय इतिहास का आधुनिक काल १९ मीं शताब्दी से प्रारंभ होता है। जिस प्रकार भक्तिआंदोलन सारे देश में एक साथ नहीं फैला उसी प्रकार नवजागरण भी देश के किसी प्रदेश में पहले आया और किसी अंचल में बाद में। सब से पहले सन् १७५७ में उनका आरंभ बंगाल से हुआ। बाद में प्लासी के युद्ध में अंग्रेजों की विजय और बंगाल के नवाब की पराजय हुई। सन् १८१८ में महाराष्ट्र अंग्रेजों के आधीन हो गया। वहाँ भी आधुनिक काल का प्रारंभ उसी काल से मानाजाता है। सन् १८५६ में अवध भी अंग्रेजी राज्य का अंग बना सन् १८५७ में प्रथम स्वतंत्रता का संग्राम हुआ। हिन्दी भाषा – भाषी प्रदेश में- विशेष रूप से उत्तरप्रदेश में इसी वर्ष से आधुनिक काल का आरंभ माना गया हैं। यानी बंगाल के आधुनिक काल से सौ वर्ष बाद। इसे से ध्वनित होते है कि आधुनिक काल के आनेका श्रेय अंग्रेजी उपनिवेशवाद को है।

सन् १८८४ में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र 'काल चक्र' तैयार कर रहे थे। इस में 'संसार में जो बड़ी घटनाएँ हुई है उनका समय निर्णय' किया गया है। इस कालावधि में, ऐतिहासिक माँग के फल स्वरूप निबंध के अतिरिक्त नाटक, उपन्यास और कहानी लेखन की भी शुरुआत हुई। साहित्य के इन विविध रूपों में भी अनेक प्रकार के अंतर्विरोध दिखाई पड़े। इस काल में व्यापारियों और पढ़े-लिखे लोगों का एक मध्य वर्ग पैदा हो गया था। उपन्यास का आविर्भाव मध्यवर्गीय आकांक्षाओं और समस्याओं को लेकर हुआ। कुछ लोग इस का आरंभ भारतेन्दुजी की 'एक कहानी-कुछ आप बीती, कुछ जग बीती' से मानते है इसके कुछ ही पृष्ठ लिखे गये थे। पर इसके आधार पर भारतेन्दुजी को हिन्दी उपन्यास का पुरुस्कर्ता नहीं माना जा सकता। हिन्दी उपन्यासों की परम्परा को पीछे ढकेल ने की प्रवृत्ति के कारण कुछ लोग 'देवरानी-जेठानी की कहानी' १८७०, वामा शिक्षक १८७२, भाग्यवती १८७२, को पहले उपन्यासों में गिनते है। परन्तु ये स्त्रिजानोचित शिक्षा- ग्रन्थ हैं। इस में औपन्यासिक तत्वों का आभाव सा हैं।

हिन्दी कथासाहित्य ने बहुत अल्प समय में आश्चर्यजनक और अभूतपूर्व प्रगति की है । कथासाहित्य की उत्पत्ति भी मनुष्य के विकास के साथ-साथ ही हुई । इस दृष्टि से इस निष्कर्ष को अधार मानकर चला जासकता है कि मानव जीवन में घटित होने वाले अनेक उतार – चढ़ावों का प्रभाव साहित्य पर पड़ता चलता है । अत: कथा-साहित्य को इस नियम का अपवाद कहकर उसके इस प्रभाव से मुक्त बने रहने के सिद्धांत का प्रतिपादन करने की चेष्टा व्यर्थ होगी, क्योंकि स्थूल रूप से यह सर्वमान्य कहा जा सकता है कि एक प्रकार से अन्य साहित्यांगों की अपेक्षा उपन्यास में जीवन कों प्रतिबिम्बित करने की क्षमता अधिक है । कमसे कम आधुनिक युग के विचारों ने एक स्वर से इस मन्तव्य का प्रतिपादन करते हुए उसके सर्वाधिक महत्व की घोषणा की है । हिन्दी उपन्यास का जन्म उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम चतुर्थांश से हुआ था । आरंभिक समय में अनेक अनुवादित उपन्यासों से हुआ और हिन्दी साहित्य का प्रथम मौलिक उपन्यास के रूप में लाला श्रीनिवास दास की परीक्षा गुरु को माना गया है । हाँलाकि आधुनिक शास्त्रीय विवेचन की दृष्टि

से कुछ कमियाँ हो परंतु यह हमारे उपन्यास साहित्य का बिज रूप है । इस बिज से ही आधुनिक हिन्दी उपन्यास का वटवृक्ष खिला है ।

सामान्य रूप से कहा जाता है कि अनुराग- विराग तथा सुख-दुःख का समन्वय ही साहित्य है । साहित्य के रस का आनन्द अलौकिक है, क्योंकि साहित्य हमारी रुचि का परिष्कार करके उसका स्तर ऊँचा उठता है । प्रभाव की दृष्टि से देखा जाय तो मनुष्य पर किसी देखी हुई साधारण घटना की तुलना में किसी पढ़ी हुई घटना का प्रभाव अधिक गहरा और स्थाय पड़ता है । हिन्दी साहित्य में आधुनिक युग को गध का युग माना जाता है । आज गध साहित्य और विशेष रूप से उपन्यास साहित्य की जितनी अधिक उन्नति संसार की भाषाओं के साहित्य में हो रही है, उतनी अन्य किसी साहित्यांग की नहीं । कुछ समय पूर्व भ्रामक धारणा थी कि उपन्यास की कोई शास्त्रीय मर्यादा नहीं है । परंतु अब इस भ्रम का निवारण हो चुका है । आधुनिकयुग के महान उपन्यासों को देखने से इस बात का परिचय मिलता है कि जीवन का कितना सम्पूर्ण और गहन चित्रण उपन्यास में संभाव्य है ।

आधुनिक हिन्दी उपन्यास का आरम्भ भारतेन्दु से माना जाता है । वैसे तो उसके आविर्भाव से पूर्व भी हिन्दी गध-साहित्य का प्रारंभ हो चुका था । हिन्दी के उपन्यास साहित्य की परम्परा के विकास में भारतेन्दुजी का मौलिक योगदान उतना महत्वपूर्ण नहीं रहा फिर भी अपने युग के साहित्यकारों में उनका स्थान विशिष्ट है ।हिन्दी साहित्य का प्रथम मौलिक उपन्यास लिखने का श्रेय लाला श्री निवास दास लिखित 'परीक्षा गुरु' को दिया जाता है । वैसे आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'भाग्यवती' को मौलिक उपन्यास माना है । उनका मानना है कि – "पण्डित श्रद्धाराम फुल्लौरी ने अपने अन्य ग्रन्थ के साथ इसकी भी रचना की थी ।"[i] उन्होंने यह भी लिखा कि सन् १९३४ में भाग्यवती नामक एक सामाजिक उपन्यास उन्होंने लिखा । फिर भी ' परीक्षा गुरु ' को शुक्लजी ने अंग्रेजी ढंग का प्रथम मौलिक उपन्यास माना है ।[ii] उतना ही नहीं अन्य विद्धानों ने भी परीक्षा गुरु को ही हिन्दी का सर्वप्रथम मौलिक उपन्यास माना है । उसी अर्थ में डॉ. श्रीकृष्ण लाल का कथन है कि 'रणधीर और प्रेम मोहिनी' के पश्चात् सन् १८८२ में लाला जी का प्रथम उपन्यास 'परीक्षा गुरु' प्रकाशित हुआ जिसे हिन्दी का भी प्रथम उपन्यास कहा जा सकता है ।

अम्बिकादत्त व्यास ने 'गध –काव्य-मीमांसा' के अंत में कुछ उपन्यासों के नाम और प्रकाशन तिथि दी है जिसके अनुसार 'परीक्षा गुरु' ही हिन्दी का सर्वप्रथम उपन्यास ठहरता है । इससे पूर्वे दो उपन्यास ग्रन्थों की रचना का उल्लेख मिलता है –एक पंजाब के श्रद्धाराम फुल्लौरी का ' भाग्यवती' तथा दूसरा भारतेन्दुजी रचित 'पूर्णप्रभा चन्द्रप्रकाश' है , परंतु पिछली कृति गुजराती से अनुवाद मात्र है जिसे मल्लिका देवी ने अनुवाद किया था और भारतेन्दु ने उसे ढूँढा था । 'भाग्यवती' यदि मौलिक रचना है तो निश्चित रूप से उसे हिन्दी का सर्वप्रथम उपन्यास माना जा सकता है , परंतु हिन्दी का प्रथम सफल और मौलिक उपन्यास लाला श्रीनिवास दास का 'परीक्षा गुरु ' ही है, जिसका 'भारतेंदु पत्रिका ' ने 'रणधीर और प्रेममोहिनी ' का सहोदर कहकर स्वागत किया था ।[iii] लाला श्रीनिवास दास का स्थान भारतेन्दुयुग के प्रमुख नाटककारों तथा उपन्यासकारों में है । वे हिन्दी, संस्कृत, फारसी, तथा अंग्रेजी भाषाओँ के जानकर थे । अनेक मौलिक पुस्तकों की रचना करने के साथ-साथ इन्होंने 'सदादर्श' नामक पत्र का सम्पादन भी किया । इनके रचित ग्रन्थों में 'रणधीर और प्रेममोहिनी' नामक नाटक तथा 'परीक्षा गुरु' नामक उपन्यास विशेष प्रसिद्ध है । हिन्दी में मौलिक उपन्यास की परम्परा का प्रवर्तन करनेवाले श्रीनिवास दास ही हैं । उन्की उपन्यास 'परीक्षा गुरु' उस युग की प्रथम मौलिक नवीन कृति है । लाला श्रीनिवास दास ने इसके निवेदन में लिखा है कि –'अब तक नागरी और उर्दू भाषा में अनेक तरह की अच्छी-अच्छी पुस्तकें तैयार हो चुकी है परंतु मेरे जान से इस रीति से कोई नहीं लिखी गई इसलिए अपनी भाषा में यह नई चाल की पुस्तक होगी । यह सच है कि नई चाल की चीज देखने को सब का जी ललचाता है परंतु पुरानी रीति के मन में समाये रहने और नई रीति को मन लगाकर समझ ने में थोड़ी महनत होने से पहले पढ़नेवाले का जी कुछ, उलझनें लगता है और मन उछट जाता है इससे इसका हाल समझमे आने के लिए मैं अपनी तरफ से यहाँ कुछ खुलासा करना चाहता हूँ ।'[iv]

– 'पहले तो पढनेवाले इस पुस्तक मैं सौदागर की दूकान का हाल पढ़ते ही चकारावेंगे क्योंकि अपनी भाषा में अबतक वर्तारुपी जो पुस्तकें लिखी गई है उन्में अक्सर नायक, नायका वगेरे का हाल ठेठसे सिलसिलेवार लिखा गया है जैसे कोई राजा, बादशाह, सेठ साहूकार का लड़का था उसके मन में इस बात से यह रूचि हुई और उसका यह परिणाम निकला' ऐसा सिलसिला इसमें कुछ भी नहीं मालूम होता । लाला मदनमोहन एक अंग्रेजी सौदागर की दूकान मैं अस्बाब देख रहे हैं लाला ब्रजकिशोर, मुंशी चुन्नीलाल और मास्टर शिम्भूदयाल उनके साथ है । इन में मदनमोहन कौन, ब्रजकिशोर कौन और शिम्भूदयाल कौन हैं ? इनका स्वभाव कैसा है ? परस्पर सम्बन्ध कैसा है ? हरेक की हालत क्या है ? यहाँ इस समय किस लिए इकट्ठे हुए ? यह बाते पहले से कुछ भी नहीं जताई गई । हाँ पढनेवाले धैर्य से पूरा पुस्तक पढ़ लेंगे तो अपने , अपने मौके पर सब भेद खुल्ता चला जायगा और आदि से अन्त तक सब मेल मिल जायगा परंतु जो साहब इतना धैर्य न रक्खेंगे वह इसका मतलब भी नहीं समझ सकेंगे ।[v]

'परीक्षा गुरु' एक शिक्षा – प्रद उपन्यास है । इसमें यह दिखया गया है कि एक धनी व्यक्ति किस तरह से अपने चापलूस मित्रों के संगत में पड़कर ऋणी होकर दुखी होते है, तथा अंत में एक ईमानदार मित्र की सहायता से उसका कल्याण होता है । इस उपन्यास की शैली तर्कपूर्ण है, जिसमे शिक्षा और उपदेशात्मकता की भावनाओं की प्रधानता है । जैसे उदाहरण के रूप में "मुझे आपकी यह बात बिल्कुल अनोखी मालूम होती है । भला परोपकारदि शुभ कामों का परिणाम कैसे बुरा हो सकता है ? पण्डित पुरषोत्तमदास ने कहा । 'जैसे अन्न प्राणधार है, परंतु अति भोजन से रोग उत्पन्न होता है, लाला ब्रज किशोर कहने लगे देखिए परोपकार की इच्छा अत्यंत उपकारी है परंतु हद से आगे बढ़ने पर वह भी फिजूलखर्ची समझी जायगी और अपने कुटुम्ब परिवारदि का सुख नष्ट हो जायगा । जो आलसी अथवा अधर्मियों की सहायता की, तो उससे संसार में आलस्य और पाप की वृद्धि होगी । इसी तरह कुपात्र में भक्ति होने से लोक- परलोक दोनों नष्ट जायेंगे । न्यायपरता यधपि सब वृत्तियों को समान रखने वाली है, परंतु इसकी अधिकता से भी मनुष्य के स्वभाव में मिलनसारी नहीं रहती, क्षमा नहीं रहती । जब वृद्धि वृत्ति के कारण किसी वस्तु के विचार में मन अत्यंत लग जायगा तो और जानने लायक पदार्थों की अज्ञानता बनी रहेगी । आनुषांगिक प्रवृत्ति के प्रबल होने से जैसे संग होगा, वैसा रंग तुरंत लग जायगा ।[vi]

'परीक्षा गुरु' उपन्यास में दिल्ली के एक कल्पित धनाढ्य व्यक्ति की कथा है । जैसे कि इस युग के कुछ अन्य उपन्यासों के विषय में कहा गया है, इस उपन्यास में भी प्रत्येक प्रकरण के आरंभ में तथा मध्य और अंत में भी कहीं-कहीं विविध पद्य –उद्दरण तथा निति-काव्य या सूक्ति रूप में कुछ गद्य – उद्दरण दिये गये है । उपन्यास के आरंभ में लाला मदनमोहन, लाला ब्रजकिशोर, मुंशी चुन्नीलाल तथा मास्टर शिम्भूदयाल के एक अंग्रेजी सैदागर की दूकान पर जा कर माल खरीदने से इस उपन्यास के प्रथम प्रकरण आरंभ होता है । बीच में बातचीत के दौरान में एक दोहा इस प्रकार कहा गया है कि- 'धनी दरिद्री सफल जन हैं जग के आधी, चाहत धनी विशेष कछु तासों ते अति दीन ।' लाला मदनमोहन और अंग्रेजी व्यापारी की बातचीत से कथा का यह प्रारंभिक सूत्र आगे बढ़ता है । किंतु स्वयं लेखक वार्तालाप से संतुष्ट न होकर अनावश्यक से कुछ पंक्तियाँ जोड़ देता है –'इस वचन में मिस्टर ब्राईट अपने अस्बाब की खरीदारी के लिए लाला मदनमोहन को ललचाता है । परंतु अपने रुपये के वास्ते मीठा तकाजा भी करना है । चुन्नीलाल और शिम्भूदयाल के कारण उसको मदनमोहन के लेन देन में बहुत कुछ फायदा हुआ परंतु उसके पचास हजार रूपये इस समय मदनमोहन की तरफ से बाकी है और मदनमोहन की बाबत तरह तरह की चर्चा फैल रही है । बहुत लोग मदनमोहन को फिजूल खर्च, दिवालिया बतातें है और हकीकत में मदनमोहन का खर्च दिनबदिन बढ़ता जाता है इससे मिस्टर ब्राईट को अपनी रकम का खटका है इसलिए उसने इन काँचों का सौदा इस समय अटकाया है और तीसरे पहर मास्टर शिम्भूदयाल कों अपने पास बुलाया है ।

उपन्यास के बीच-बीच में शेक्सपीयर तथा बायरन आदि कवियों के विविध प्रसंगों-अंशो के अनुवाद दिये गये हैं । उसी प्रकार उपन्यास में मनुस्मृति , हितोपदेश आदि से भी कुछ अंश प्रस्तुत किए गए हैं । परंतु हमें एक बात तो स्वीकारनी होगी कि इस उपन्यास का कथानक इस युग में लिखे गये अन्य बहुत से उपन्यासों की अपेक्षा अधिक सुगठित है और उसका निर्वाह भी अपेक्षाकृत कलात्मक ढंग से किया गया है यधपि स्वतंत्र-रूप से देखने में इसमें संगठनात्मकता का अभाव प्रतीत होता है ।अवश्य जिन उद्दरणों की ऊपर चर्चा की गयी है, वे अस्वाभाविक ढंग से कथा में समाविष्ट किये गये प्रतीत होते हैं और साथ ही साथ कथा में नाटकीय तत्वों की भी कमी नहीं है । उपन्यास में भावमयता बहुत अधिक है और सामान्य रूप से प्राय: प्रत्येक पात्र किसी न किसी प्रसंग में भावुक होकर कुछ न कुछ कहने लगते है । कथानक में इस प्रकार के भावुकतापूर्ण प्रसंग इतने अधिक है कि उनके कारण उसकी गंभीरता और ठोसपन समाप्त हो गया है । साथ ही प्रत्येक घटना की प्रभावात्मकता पर भी इसका असर पड़ा है । लाला मदनमोहन की फिजूलखर्ची को ही उपन्यास में आरंभ से अंत तक दिखाया गया है और इस प्रकार एक लघु आकर वाले कथानक को फैलाकर तीन सौ से अधिक पृष्ठों का उपन्यास लिखा गया है ।

परीक्षा गुरु के निवेदन के अंत में उपन्यासकार ने कहा है कि ' इस पुस्तक के रचनें में मुझको महाभारतादि संस्कृत, गुलिस्ताँ वगैर फारसी स्पेक्टर, लार्ड बेकन, गोल्ड स्मिथ, विलियम कूपर आदि के पुराने लेखों और स्त्रोत बोध आदि के वर्तमान रिसालों से बड़ी सहायता मिली है इसलिए इन सबका मैं बहुत उपकार मानता हूँ और दीनदयालु परमेश्वर की निहैतुक कृपा का सच्चे मन से अमित उपकार मानकर लेख समाप्त करता हूँ ।'[vii] परिणाम: समग्र उपन्यास पर गोर करे तो इस में स्थान – स्थान पर निति वाक्यों तथा उन्की पुष्टि में प्रासंगिक रूप से देश विदेश के इतिहासों से लम्बे-लम्बे उद्दरण लिये गये है । परंतु यह उपन्यास का आरंभिकयुग होने के कारण 'परीक्षा गुरु' को उपन्यास के शास्त्रीय तत्वों के आधार पर मूल्यांकन करने में सफलता प्राप्त नहीं होगी यह स्वभाविक है । साहित्य के इतिहास में कोई भी काल की आरंभिक अवस्था भी अपरिपक्व ही रही है । परंतु लाला श्रीनिवास दास ने स्वयं की ओर से मौलिकता प्रदान करने का प्रयास किया है। साथ ही दुसरे विद्धानों ने उसका समर्थन भी किया है । उपन्यास साहित्य में कथा विकास की

पद्धतियों में से लालाजी ने इस उपन्यास में सामान्य वर्णनात्मक पद्धति का प्रयोग करके उपन्यास की कथावस्तु को आगे बढाया है ।

निष्कर्ष: -

इस उपन्यास की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें नवजागरण की प्रतिध्वनी सुनाई पड़ती है। अपनी भाषा की उन्नति के साथ इस में नये ढंग की खेती और कल-कारखाने की उन्नति पर बल दिया गया है। 'अंग्रेजों की नक़ल को निषिद्ध ठहराया गया है। देशी भषा में शिक्षा देने पर जोर दिया गया है। अख़बारों की कद्र न करने की निन्दा की गई है पुरानी पीढ़ी की कर्मठता को अनुकरणीय बताया गया है। इसी तरह उस युग कों समग्रता में समेटने का जो प्रयास लालाजी ने किया है, वह प्रशंसनीय है।'[viii] प्रेमचन्द के आदर्शोन्मुखी यथार्थ की गंगा की गौमुखी यही है।

हिन्दी कथा-साहित्य को एक नवीन रूप देनेवालों में लाला श्रीनिवास दास का नाम सबसे पहले आता है । सर्वप्रथम इन्होनें ही ऐसे विषयों पर उपन्यास लिखने की परम्परा का प्रवर्तन किया जो अबतक अछूते –से थे । इनकी कथा कृति में साधारण प्रेम व्यापार और अनुरक्ति आदि का प्राबल्य नहीं मिलता है । यही कारण है कि एक परम्परा का प्रारंभ होता है, जिसका अनुसरण भारतेन्दु युग के अनेक कथाकारों ने लिया । इस कथा परम्परा में आनेवालों में ठाकुर जगमोहन सिंह,पण्डित अम्बिकादत्त व्यास, तथा पण्डित बालकृष्ण भट्ट के नाम उल्लेखनीय है ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचि:

1. [i] आत्मा-चिकित्सा से
2. [ii] आ. रामचन्द्र शुक्ल , हिन्दी साहित्य का इतिहास – पृ. ४१७
3. [iii] सं. डॉ.श्रीकृष्ण लाल , श्रीनिवास ग्रन्थावली —पृ. ११
4. [iv] लाला श्रीनिवास दास ग्रन्थावली पृ.१५४
5. [v] वही पृ. १५५
6. [vi] परीक्षा गुरु ले. लाला श्रीनिवास दास –पृ. १५७
7. [vii] श्रीनिवास ग्रन्थावली पृ.१५६
8. [viii] बच्चन सिंह , हिन्दीसाहित्य का दूसरा इतिहास- पृ.३२२